मानव जाति से परे

drishtiias.com/hindi/printpdf/looking-beyond-our-own-species

क्या पशुओं को किसी भी तरह का कोई अधिकार प्राप्त है? यदि है, तो इन अधिकारों को किस प्रकार प्रशासित किया जाता है तथा इन अधिकारों को किसके खिलाफ इस्तेमाल किया जाता है? यदि ऐसा नहीं है, तो क्या मनुष्यों को जानवरों की देखभाल करने तथा उन पर दया दिखाने संबंधी दायित्व सौंप दिये जाने चाहियें? क्या इनमें से कोई भी अधिकार अथवा ज़िम्मेदारी अपरिहार्य है? साथ ही, क्या जानवरों की सुरक्षा तथा आश्रय के लिये सुनिश्चित किये गए कर्तव्यों को भारतीय संविधान के अंतर्गत उल्लिखित किया गया है? यदि हाँ, तो किस सीमा तक इन कर्तव्यों को विस्तारित किया जा सकता है? क्या पशुओं को किसी भी तरह का कोई अधिकार प्राप्त है? यदि है, तो इन अधिकारों को किस प्रकार प्रशासित किया जाता है तथा इन अधिकारों को किसके खिलाफ इस्तेमाल किया जाता है? यदि ऐसा नहीं है, तो क्या मनुष्यों को जानवरों की देखभाल करने तथा उन पर दया दिखाने संबंधी दायित्व सौंप दिये जाने चाहियें? क्या इनमें से कोई भी अधिकार अथवा ज़िम्मेदारी अपरिहार्य है? साथ ही, क्या जानवरों की सुरक्षा तथा आश्रय के लिये सुनिश्चित किये गए कर्तव्यों को भारतीय संविधान के अंतर्गत उल्लिखित किया गया है? यदि हाँ, तो किस सीमा तक इन कर्तव्यों को विस्तारित किया जा सकता है?

प्रमुख बिंदु

- उक्त प्रश्नों में से कुछ को उस समय सर्वोच्च न्यायालय के विचारों के मूल में सम्मिलित किया गया जब तमिलनाडु सरकार द्वारा अपने एक नए कानून में जल्लीकट्टू को आयोजित किये जाने के संबंध में स्वीकृति प्रदान की गई|
- इस नए कानून के अंतर्गत कुछ जटिल तथा भिन्न संवैधानिक समस्याओं को भी शामिल किया गया है| हालाँकि, इस कानून के अंतर्गत इन समस्याओं का कोई आसान उत्तर नहीं दिया गया है|
- इन सभी समस्याओं से पार पाने के लिये सर्वोच्च न्यायालय को कानून-निर्माण प्रक्रिया में घुसपैठ करने की आवश्यकता है| हालाँकि, इसके लिये इस बात का विशेष ख्याल रखा जाना चाहिये कि ऐसी किसी भी प्रक्रिया अथवा गतिविधि के कारण भारत के संवैधानिक ढाँचे को नुकसान नहीं पहुँचना चाहिये|
- जल्लीकट्टू के सन्दर्भ में उठे विवाद के विषय में निणर्य चाहे जो हो लेकिन एक बात तो स्पष्ट है कि वर्तमान में भारत में मौजूद पशु कल्याण से संबंधित वैधानिक तंत्र (legal regime) पूरी तरह से अपर्याप्त है| साथ ही, यह व्यवस्था जानवरों को उचित सम्मान तथा गरिमा प्रदान करने में भी पूर्णतया असमर्थ है| हालाँकि, समय की मांग ये है कि हमें पहले की अपेक्षा एक अधिक बेहतर तथा स्थाई तंत्र की आवश्यकता है|

रुक्मिणी अरुन्दाले के प्रयास

- भारत में जानवरों की सुरक्षा के संबंध में कानून-निर्माण प्रक्रिया स्वतन्त्रता के उपरांत ही आरंभ हो गई थी| थियोसोफिकल सोसाइटी की अनुयाई तथा एक प्रख्यात नृत्यांगना रुक्मिणी देवी अरुन्दाले द्वारा उक्त विषय के संदर्भ में वर्ष 1952 में एक निजी विधेयक प्रस्तुत किया गया|
- ध्यातव्य है कि रुक्मिणी देवी उस समय राज्यसभा की एक नामांकित सदस्य भी थी|

- उसी समय स्वतंत्र भारत के प्रधानमन्त्री श्री जवाहरलाल नेहरु द्वारा रुक्मिणी देवी से अपना प्रस्ताव वापस लेने संबंधी सिफारिश की गई| वस्तुतः इस सिफारिश का मुख्य कारण यह दिया गया कि नेहरु सरकार उक्त विषय में जाँच हेतु एक समिति का गठन करने पर विचार कर रही है, ताकि भविष्य में इस विषय में एक बेहतर विधान का प्रबंध किया जा सकें|
- हालाँकि वर्ष 1960 में, जब पशु क्रूरता निवारण अधिनियम (Prevention of Cruelty to Animals Act - PCA Act) लाया गया तो उसके अंतर्गत रुक्मिणी देवी द्वारा प्रस्तुत विधेयक के कुछ प्रावधानों को शामिल नहीं किया गया| उदाहरण के लिये, इस अधिनियम के अंतर्गत दवाओं के प्रभावों की जाँच करने के लिये जानवरों को प्रयोग किये जाने संबंधी प्रावधान को संरक्षण प्रदान किया गया था|
- पंरतु उक्त कुछ खामियों के अतिरिक्त इस अधिनियम के अंतर्गत उन सभी प्रावधानों को शामिल किया गया जिन्हें रुक्मिणी देवी के विधेयक में सम्मिलित किया गया था|
- ध्यातव्य है कि अब से 15 वर्ष पूर्व ऑस्ट्रेलिया के दर्शनशास्त्री पीटर सिंगर (Peter Singer) द्वारा अपनी किताब "एनिमल लिबरेशन" (Animal Liberation) में पशु अधिकारों के साथ-साथ पशु कल्याण संबंधी गतिविधियों को बढ़ावा देने के लिये आधारभूत कार्य को प्राथमिकता प्रदान की गई|
- इस किताब में सिंगर के द्वारा इस बात पर विशेष बल दिया गया कि जानवरों को भी मनुष्यों की ही भांति तकलीफ एवं दुःख-दर्द की अनुभति होती हैं| जानवरों की प्रवृत्ति भी मानवों की ही तरह होती है| इनकी त्वचा भी मनुष्यों की भांति संवेदनशील होती है|
- अपनी बात को स्पष्ट करने के लिये सिंगर एक उदाहरण भी प्रस्तुत करते है, उनके अनुसार, अगर कोई व्यक्ति किसी घोड़े की पीठ पर अपना हाथ मारता है (थप्पड़ मारता है) तो घोड़ा तुरंत दौड़ना आरंभ कर देता है, यह और बात है कि उसे इस मार से दर्द की अनुभूति भी होती है| इसी तरह यदि कोई व्यक्ति अपने बच्चे को थप्पड़ मरता है यो बच्चे को भी वही अनुभूति होती है जो उस घोड़े को हुई थी, स्पष्ट है कि मनुष्य के साथ-साथ जानवरों की त्वचा भी संवेदनशील होती है|
- एक अन्य पक्ष के अनुसार, जानवरों को संपत्ति के रूप में व्यक्त करना मनुष्य की स्वार्थपरक शोषणकारी नीतियों को ही दृष्टिगत करता है| इसका कारण यह है कि जानवरों की स्वभाविक प्रवत्ति मुक्त रूप से विचरण करने की होती है| ऐसे में उन्हें गुलाम बनाकर उन्हें अपने हिसाब से संचालित करना भी जानवरों की स्वतन्त्रता का उल्लंघन करना है|

संघ बनाम राज्य

- गौरतलब है कि भारत के संवैधानिक ढाँचे के तहत पशुओं की क्रूरता के सम्बन्ध में केंद्र तथा राज्य सरकारें, दोनों ही कानून बना सकती हैं| परन्तु यदि किसी कारण दोनों के मतों में भिन्नता उत्पन्न होती है तो ऐसे अधिनियम को राष्ट्रपति की अनुमति के लिये सुरक्षित रख दिया जाता है|
- ध्यातव्य है कि तमिलनाडु राज्य सरकार द्वारा जनवरी माह में जल्लीकट्टू से संबंधित कानून को लागू करने के लिये निश्चित रूप से यही दृष्टिकोण अपनाया था|
- यह कानून (जिसे 31 जनवरी को राष्ट्रपति की अनुमति के लिये सुरक्षित रखा गया था) पशु क्रूरता निवारण अधिनियम में सशोधन का प्रावधान करता है|
- संभवतः संविधान निर्माताओं के द्वारा कभी इस ओर ध्यान नहीं दिया गया कि संविधान में पशुओं के संबंध में भी मूल अधिकारों की व्यवस्था की जानी चाहिये|
- इस संबंध में कुछ विद्वानों जैसे स्टीवन वाइज़ (एक अमेरिकी अधिवक्ता) द्वारा पाशु संबंधी विवादों को विधि के अनुसार बताया गया है|
- इन्होंने अपनी पुस्तक 'रेटलिंग द केज' (Rattling the Cage) में उन सभी कृत्रिम संस्थाओं को सूचीबद्ध किया गया है जिन्हें कानूनी व्यक्ति माना जाता है उदाहरण के लिये निगम, जहाज, भागीदार, सरकार और अन्य|
- स्टीवन वाइज़ ने भारतीय सर्वोच्च न्यायालय के एक निर्णय के सन्दर्भ में भारत की रणनीतियों की ओर भी एक संकेत किया है| ध्यातव्य है कि सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अपने एक निर्णय में सिखों के पवित्र ग्रन्थ गुरु ग्रन्थ साहिब को एक क़ानूनी व्यक्ति (juristic person) करार करते हुए हिन्दुओं कि मूर्तियों को भी क़ानूनी संस्था के रूप में मान्यता प्रदान

की गई थी|

- परन्तु यदि वाइज के कथन की विस्तारपूर्वक संवैधानिक व्याख्या की जाए तो स्पष्ट होता है संविधान के अनुच्छेद 14 के तहत सभी मनुष्यों को पशुओं के साथ अपने समान व्यवहार करना चाहिए| हालाँकि इस सन्दर्भ में जल्लीकट्टू को भी असंवैधानिक करार दिया जाना चाहिये परन्तु समाज के बड़े वर्ग का समर्थन प्राप्त होने के कारण इस अमानवीय प्रथा को प्रतिबंधित किया जाना कोई आसान कार्य नहीं होगा|

सबसे उत्तम आचरण

- हालाँकि संभव है कि जर्मनी का एक उदाहरण हमे इस सन्दर्भ में कोई बेहतर विकल्प सुझा सकें| वर्ष 2002 में जर्मनी द्वारा अपने संविधान में एक संशोधन किया गया, इस संशोधन के अंतर्गत देश में पशुओं की सुरक्षा तथा गरिमा बनाए रखने के सन्दर्भ में सभी राज्यों को एक संवैधानिक जनादेश जारी किया गया|
- साथ ही इस जनादेश में वर्णित सभी प्रावधानों को अनिवार्य स्वरूप प्रदान करते हुए देश की जनता को पशुओं के अधिकारों के प्रति भी सचेत करने संबंधी एक विशेष पहल आरंभ की गई|
- स्पष्ट है कि इस जनादेश के उपरांत जर्मनी में पशु अधिकारों के विरुद्ध किसी भी अमानवीय गतिविधियों (चाहे वह भोजन के लिये पशुओं की हत्या करना हो या फिर डेयरी उत्पादों के लिये पशुओं का उपयोग) को विधायी रूप से संशोधित कर दिया गया है|

निष्कर्ष

स्पष्ट है कि भारत सरकार को भी देश में पशुओं की गरिमा बनाए रखने तथा उनकी सुरक्षा को सुनिश्चित करते हुए पशु अधिकारों को अभेद्य बनाने के लिये ऐसा की एक कानून लागू करने की आवश्यकता है|बहुत समय पहले एक अमेरिकी दर्शनशास्त्री मार्था नुस्सबौम (Martha Nussbaum) ने कहा था कि वैश्विक न्याय के दायरे में हमेशा समान न्यायिक अधिकारों पर बल दिया जाता है| इसके अंतर्गत गरीबों, महिलाओं, जातीय तथा धर्म के आधार पर पिछड़े समुदायों, अपंगों, शरणार्थियों तथा अन्य के न्यायिक अधिकारों की बात की जाती है| परन्तु कभी भी मानव समुदाय द्वारा अपनी प्रजाति के बाहर के लोगों के विषय में इस तरह की कोई भी मांग क्यों नहीं की? इस स्वयं में गहन विचार का मुद्दा है| बदलते परिदृश्य में मानव को अपनी प्रजाति के बाहर के जीवों विशेषकर पशुओं के अधिकार के विषय में गंभीरता से विचार करने की आवश्यकता है| उक्त प्रश्नों में से कुछ को उस समय सर्वोच्च न्यायालय के विचारों के मूल में सम्मिलित किया गया जब तमिलनाडु सरकार द्वारा अपने एक नए कानून में जल्लीकट्टू को आयोजित किये जाने के संबंध में स्वीकृति प्रदान की गई| इस नए कानून के अंतर्गत कुछ जटिल तथा भिन्न संवैधानिक समस्याओं को भी शामिल किया गया है| हालाँकि, इस कानून के अंतर्गत इन समस्याओं का कोई आसान उत्तर नहीं दिया गया है| इन सभी समस्याओं से पार पाने के लिये सर्वोच्च न्यायालय को कानून-निर्माण प्रक्रिया में घुसपैठ करने की आवश्यकता है| हालाँकि, इसके लिये इस बात का विशेष ख्याल रखा जाना चाहिये कि ऐसी किसी भी प्रक्रिया अथवा गतिविधि के कारण भारत के संवैधानिक ढाँचे को नुकसान नहीं पहुँचना चाहिये| जल्लीकट्टू के सन्दर्भ में उठे विवाद के विषय में निणर्य चाहे जो हो लेकिन एक बात तो स्पष्ट है कि वर्तमान में भारत में मौजूद पशु कल्याण से संबंधित वैधानिक तंत्र (legal regime) पूरी तरह से अपर्याप्त है| साथ ही, यह व्यवस्था जानवरों को उचित सम्मान तथा गरिमा प्रदान करने में भी पूर्णतया असमर्थ है| हालाँकि, समय की मांग ये है कि हमें पहले की अपेक्षा एक अधिक बेहतर तथा स्थाई तंत्र की आवश्यकता है| रुक्मिणी अरुन्दाले के प्रयास भारत में जानवरों की सुरक्षा के संबंध में कानून-निर्माण प्रक्रिया स्वतन्त्रता के उपरांत ही आरंभ हो गई थी| थियोसोफिकल सोसाइटी की अनुयाई तथा एक प्रख्यात नृत्यांगना रुक्मिणी देवी अरुन्दाले द्वारा उक्त विषय के संदर्भ में वर्ष 1952 में एक निजी विधेयक प्रस्तुत किया गया| ध्यातव्य है कि रुक्मिणी देवी उस समय राज्यसभा की एक नामांकित सदस्य भी थी| उसी समय स्वतंत्र भारत के प्रधानमन्त्री श्री जवाहरलाल नेहरु द्वारा रुक्मिणी देवी से अपना प्रस्ताव वापस लेने संबंधी सिफारिश की गई| वस्तुतः इस सिफारिश का मुख्य कारण यह दिया गया कि नेहरु सरकार उक्त विषय में जाँच हेतु एक समिति का गठन करने पर विचार कर रही है, ताकि भविष्य में इस विषय में एक बेहतर विधान का प्रबंध किया जा सकें| हालाँकि वर्ष 1960 में, जब पशु क्रूरता निवारण अधिनियम (Prevention of Cruelty to Animals Act - PCA Act) लाया गया तो उसके अंतर्गत रुक्मिणी देवी द्वारा प्रस्तुत विधेयक के कुछ प्रावधानों को शामिल नहीं किया गया| उदाहरण के लिये, इस

अधिनियम के अंतर्गत दवाओं के प्रभावों की जाँच करने के लिये जानवरों को प्रयोग किये जाने संबंधी प्रावधान को संरक्षण प्रदान किया गया था| पंरतु उक्त कुछ खामियों के अतिरिक्त इस अधिनियम के अंतर्गत उन सभी प्रावधानों को शामिल किया गया जिन्हें रुक्मिणी देवी के विधेयक में सम्मिलित किया गया था| ध्यातव्य है कि अब से 15 वर्ष पूर्व ऑस्ट्रेलिया के दर्शनशास्त्री पीटर सिंगर (Peter Singer) द्वारा अपनी किताब "एनिमल लिबरेशन" (Animal Liberation) में पशु अधिकारों के साथ-साथ पशु कल्याण संबंधी गतिविधियों को बढ़ावा देने के लिये आधारभूत कार्य को प्राथमिकता प्रदान की गई| इस किताब में सिंगर के द्वारा इस बात पर विशेष बल दिया गया कि जानवरों को भी मनुष्यों की ही भांति तकलीफ एवं दुःख-दर्द की अनुभति होती हैं| जानवरों की प्रवृत्ति भी मानवों की ही तरह होती है| इनकी त्वचा भी मनुष्यों की भांति संवेदनशील होती है| अपनी बात को स्पष्ट करने के लिये सिंगर एक उदाहरण भी प्रस्तुत करते है, उनके अनुसार, अगर कोई व्यक्ति किसी घोड़े की पीठ पर अपना हाथ मारता है (थप्पड़ मारता है) तो घोड़ा तुरंत दौड़ना आरंभ कर देता है, यह और बात है कि उसे इस मार से दर्द की अनुभूति भी होती है| इसी तरह यदि कोई व्यक्ति अपने बच्चे को थप्पड़ मरता है यो बच्चे को भी वही अनुभूति होती है जो उस घोड़े को हुई थी, स्पष्ट है कि मनुष्य के साथ-साथ जानवरों की त्वचा भी संवेदनशील होती है| एक अन्य पक्ष के अनुसार, जानवरों को संपत्ति के रूप में व्यक्त करना मनुष्य की स्वार्थपरक शोषणकारी नीतियों को ही दृष्टिगत करता है| इसका कारण यह है कि जानवरों की स्वभाविक प्रवत्ति मुक्त रूप से विचरण करने की होती है| ऐसे में उन्हें गुलाम बनाकर उन्हें अपने हिसाब से संचालित करना भी जानवरों की स्वतन्त्रता का उल्लंघन करना है| संघ बनाम राज्य गौरतलब है कि भारत के संवैधानिक ढाँचे के तहत पशुओं की क्रूरता के सम्बन्ध में केंद्र तथा राज्य सरकारें, दोनों ही कानून बना सकती हैं| परन्तु यदि किसी कारण दोनों के मतों में भिन्नता उत्पन्न होती है तो ऐसे अधिनियम को राष्ट्रपति की अनुमति के लिये सुरक्षित रख दिया जाता है| ध्यातव्य है कि तमिलनाडु राज्य सरकार द्वारा जनवरी माह में जल्लीकट्टू से संबंधित कानून को लागू करने के लिये निश्चित रूप से यही दृष्टिकोण अपनाया था| यह कानून (जिसे 31 जनवरी को राष्ट्रपति की अनुमति के लिये सुरक्षित रखा गया था) पशु क्रूरता निवारण अधिनियम में सशोधन का प्रावधान करता है| संभवतः संविधान निर्माताओं के द्वारा कभी इस ओर ध्यान नहीं दिया गया कि संविधान में पशुओं के संबंध में भी मूल अधिकारों की व्यवस्था की जानी चाहिये| इस संबंध में कुछ विद्वानों जैसे स्टीवन वाइज़ (एक अमेरिकी अधिवक्ता) द्वारा पाशु संबंधी विवादों को विधि के अनुसार बताया गया है| इन्होंने अपनी पुस्तक 'रेटलिंग द केज' (Rattling the Cage) में उन सभी कृत्रिम संस्थाओं को सूचीबद्ध किया गया है जिन्हें कानूनी व्यक्ति माना जाता है उदाहरण के लिये निगम, जहाज, भागीदार, सरकार और अन्य| स्टीवन वाइज़ ने भारतीय सर्वोच्च न्यायालय के एक निर्णय के सन्दर्भ में भारत की रणनीतियों की ओर भी एक संकेत किया है| ध्यातव्य है कि सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अपने एक निर्णय में सिखों के पवित्र ग्रन्थ गुरु ग्रन्थ साहिब को एक क़ानूनी व्यक्ति (juristic person) करार करते हुए हिन्दुओं कि मूर्तियों को भी क़ानूनी संस्था के रूप में मान्यता प्रदान की गई थी| परन्तु यदि वाइज के कथन की विस्तारपूर्वक संवैधानिक व्याख्या की जाए तो स्पष्ट होता है संविधान के अनुच्छेद 14 के तहत सभी मनुष्यों को पशुओं के साथ अपने समान व्यवहार करना चाहिए| हालाँकि इस सन्दर्भ में जल्लीकट्टू को भी असंवैधानिक करार दिया जाना चाहिये परन्तु समाज के बड़े वर्ग का समर्थन प्राप्त होने के कारण इस अमानवीय प्रथा को प्रतिबंधित किया जाना कोई आसान कार्य नहीं होगा| सबसे उत्तम आचरण हालाँकि संभव है कि जर्मनी का एक उदाहरण हमे इस सन्दर्भ में कोई बेहतर विकल्प सुझा सकें| वर्ष 2002 में जर्मनी द्वारा अपने संविधान में एक संशोधन किया गया, इस संशोधन के अंतर्गत देश में पशुओं की सुरक्षा तथा गरिमा बनाए रखने के सन्दर्भ में सभी राज्यों को एक संवैधानिक जनादेश जारी किया गया| साथ ही इस जनादेश में वर्णित सभी प्रावधानों को अनिवार्य स्वरूप प्रदान करते हुए देश की जनता को पशुओं के अधिकारों के प्रति भी सचेत करने संबंधी एक विशेष पहल आरंभ की गई| स्पष्ट है कि इस जनादेश के उपरांत जर्मनी में पशु अधिकारों के विरुद्ध किसी भी अमानवीय गतिविधियों (चाहे वह भोजन के लिये पशुओं की हत्या करना हो या फिर डेयरी उत्पादों के लिये पशुओं का उपयोग) को विधायी रूप से संशोधित कर दिया गया है| निष्कर्ष स्पष्ट है कि भारत सरकार को भी देश में पशुओं की गरिमा बनाए रखने तथा उनकी सुरक्षा को सुनिश्चित करते हुए पशु अधिकारों को अभेद्य बनाने के लिये ऐसा की एक कानून लागू करने की आवश्यकता है|बहुत समय पहले एक अमेरिकी दर्शनशास्त्री मार्था नुस्सबौम (Martha Nussbaum) ने कहा था कि वैश्विक न्याय के दायरे में हमेशा समान न्यायिक अधिकारों पर बल दिया जाता है| इसके अंतर्गत गरीबों, महिलाओं, जातीय तथा धर्म के आधार पर पिछड़े समुदायों, अपंगों, शरणार्थियों तथा अन्य के न्यायिक अधिकारों की बात की जाती है| परन्तु कभी भी मानव समुदाय द्वारा अपनी प्रजाति के बाहर के लोगों के विषय में इस तरह की कोई भी मांग क्यों नहीं की? इस स्वयं में गहन विचार का मुद्दा है| बदलते परिदृश्य में

मानव को अपनी प्रजाति के बाहर के जीवों विशेषकर पशुओं के अधिकार के विषय में गंभीरता से विचार करने की आवश्यकता है|